वेणीसंहार में काव्य–सौन्दर्य

डॉ0 हरीशदास*

श्रीभट्टनारायण कृत 'वेणीसंहार' नाट्यशास्त्रीय नियमों का सफल अनुसरण करने वाला एक उत्कृष्ट नाटक है। अर्थ प्रकृतियों, अवस्थाओं और सन्धियों का इसमें सुन्दर समावेश है। संवाद रोचक हैं तथा प्रकृति वर्णन के सुन्दर प्रसंग से यह पुष्ट है। वीर रस मुख्य होने से इसमें ओज गुण और गौडी शैली का प्राधान्य है। श्रृंगार, करुण, संवाद और उपदेशात्मक नीति श्लोकों के अनेक प्रसंगों में वैदर्भी और पांचाली का प्रयोग प्राप्त होता है। भाषा सबल, प्रौढ़ परिष्कृत और प्रांजल है। भावों की उदात्तता है। प्रायः सभी मुख्य रस प्राप्य हैं। अलंकार–विधान एवं छन्दोयोजना की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट नाट्यरचना है। काव्य–सौन्दर्य के विभिन्न पक्षों के उल्लेख से नाटक में कवित्व–प्रतिमा का सहज ही दर्शन हो जाता है।

वेणीसंहार में आशा के महत्त्व का कितनी सुन्दरता से प्रसाद–गुणयुक्त शैली में वर्णन है कि भीष्म, द्रोण और कर्ण की मृत्यु के बाद शल्य पर विजय की आशा बँधी है।

गते भीष्मे हते द्रोणे कर्णे च विनिपातिते।
आशा बलवती राजन्, शल्यो जेष्यति पाण्डवान्।।[1]

ओज गुण के साथ प्रसाद गुण मणि–कांचन–संयोग प्रस्तुत करता है। कर्ण की प्रसाद गुणयुक्त उक्ति में कितना स्वाभिमान और तेजस्विता है! जन्म भाग्याधीन है और पुरुषार्थ मेरे अधीन।

सूतो वा सूतपुत्रो वा यो वा को वा भवाम्यहम्।
दैवायत्तं कुले जन्म मदायत्तं तु पौरुषम्।।[2]

कवि ने माधुर्य गुण का भी सुन्दर प्रयोग किया है। भानुमती के प्रति दुर्योधन की उक्ति में ध्वन्यात्मकता, संगीतात्मकता तथा तालानुसारी नृत्य का चित्र मिलता है कि तुम धीरे–धीरे चलो, मत काँपो और मेरा आलिंगन करो।

कुरु घनोरु पदानि शनैः शनैरयि विमुंच गतिं परिवेपिनीम्।
सुतनु बाहुलतोपरिबन्धनं मम निपीडय गाढमुरःस्थलम्।।[3]

ग्रहों के शुभाशुभ फल प्रदान की चर्चा में फलित ज्योतिष पर अच्छी चुटकी ली गई है कि ग्रहों के फल तीन–तुक्के के हिसाब से कभी ठीक भी बैठ जाते हैं।

पोस्ट डॉक्टोरल फेलो (यू0जी0सी0) संस्कृत विभाग, कला संकाय का0हि0वि0वि0, वाराणसी

ग्रहाणां चरितं स्वप्नोऽनिमित्तौत्पातिकं तथा।
फलन्ति काकतालीयं तेभ्यः प्राज्ञा न बिभ्यति।।[4]

वीर रस की उक्तियों में ओज और गौडी रीति का वैभव दृष्टिगोचर होता है। भीम की प्रतिज्ञा में ओज का सुन्दर निदर्शन देखिए –

चंचद्भुजभ्रमित–चण्डगदाभिघातसंचूर्णितोरुयुगलस्य सुयोधनस्य।
स्त्यानापविद्धघनशोणित–शोणपाणिरुत्तंसयिष्यति कचांस्तव देवि भीमः।।[5]

हे देवी, भीम चंचल भुजाओं से घुमाई हुई प्रचण्ड गदा की चोट से दुर्योधन की जंघाओं को तोड़कर और उससे निकले हुए खूब गाढ़े और चिपकने वाले खून से लाल हाथों से तुम्हारे केशों को सँवारेगा।

गौडी–शैली का एक सुन्दर उदाहरण भीम की उक्ति में मिलता है –

मन्थायस्तार्णवाम्भःप्लुतकुहरचलन्मन्दरध्वानधीरः
कोणाघातेशु गर्जत्पलयघनघटान्योन्यसंघट्टचण्डः।
कृष्णाक्रोधाग्रदू कुरुकुलनिधनोत्पातनिर्घातवातः
केनास्तसिंहनादप्रतिरसितसखो दुन्दुभिस्ताडितोऽयम्।।

समुद्र–मंथन के समय मन्दराचल की ध्वनि के तुल्य गंभीर, प्रलयकालीन मेघों की घटाओं के संघर्ष से प्रचण्ड, द्रौपदी के क्रोध का अग्रदूत, कौरवों के विनाश–सूचक उत्पात की प्रचण्ड वायु और हमारे सिंहनाद की प्रतिध्वनि के तुल्य इस नगाड़े को कौन बजा रहा है?

भीम की उक्तियों में वीर रस की मनोहर अभिव्यक्ति हुई है –

मध्नामि कौरवशतं समरे न कोपाद्
दुःशासनस्य रुधिरं न पिबाम्युरस्तः।
संचूर्णयामि गदया न सुयोधनोरू
संधिं करोतु भवतां नृपतिः पणेन।।[7]

भीम सहदेव से कहता है कि क्या मैं युद्ध में क्रोध से सौ कौरवों का वध नहीं करूँगा? क्या मैं दुःशासन की छाती का खून नहीं पीऊंगा? क्या मैं गदा से दुर्योधन की जाँघ नहीं तोडूँगा? आपके राजा युधिष्ठिर सन्धि करते हैं तो करते रहें, मैं सन्धि नहीं करूँगा।

इसी प्रकार दुर्योधन की उक्ति में भी वीर रस का सुन्दर वर्णन है –

कृष्टा केशेषु भार्या तव तव च पशोस्तस्य राज्ञस्तयोर्वा
प्रत्यक्षं भूपतीनां मम भुवनपतेराज्ञया द्यूतदासी।
अस्मिन् वैरानुबन्धे वद किमपकृतं तैर्हता ये नरेन्द्रा
बाह्वोर्वीर्यातिरेकद्रविणगुरुमदं मामजित्वैव दर्पः।।[8]

हे भीम, तुम सभी पाण्डवों और राजाओं के सामने मेरी आज्ञा से द्रौपदी को बाल पकड़ कर खींचा गया था। झगड़ा मुझसे है। अन्य राजाओं ने क्या अपकार किया था जो उन्हें मारा है? मुझ महाबलशाली को बिना जीते ही तुम्हें इतना गर्व है?

द्वितीय अंक में कुछ श्लोकों में श्रृंगार रस की भी सुन्दर उद्भावना हुई है –

प्रेमाबद्धस्तिमितनयनापीयमानाब्जशोभं
लज्जायोगादविशदकथं मन्दमन्दस्मितं वा।
वक्त्रेन्दुं ते नियममुषितालक्तकाग्राधरं वा
पातुं वांछा परमसुलभं किं नु दुर्योधनस्य।।[9]

दुर्योधन भानुमती से कहता हैं कि प्रेम के कारण स्मित नेत्रों वाले तुम्हारे मुखचन्द्र ने कमल की शोभा जीत ली है; लज्जा के कारण स्पष्ट शब्द नहीं निकल रहे हैं; नियम–पालन के कारण अधरों से अलक्तक हट गया है, ऐसे मन्द स्मितयुक्त तुम्हारे मुखचन्द्र का पान करना चाहता हूँ। मुझ दुर्योधन के लिए अन्य क्या दुर्लभ है?

कुछ प्रसंगों में करुण रस का भी मनोहर चित्रण हुआ है। चार्वाक राक्षस से भीम की मृत्यु का झूठा समाचार सुनकर युधिष्ठिर शोक करते हुए कहते हैं कि तुमने मेरे बाद माता का दूध पिया; मेरा उच्छिष्ट खाया और यज्ञों में मेरे बाद ही सोमरस का पान किया। अब तुम तर्पण–जलांजलि मुझसे पहले क्यों पीते हो?

मया पीतं पीतं तदनु भवताम्बास्तनयुगं
मदुच्छिश्टैर्वृत्तिं जनयसि रसैर्वत्सलतया।
वितांनेश्वप्येवं तव मम च सोमे विधिरभू–
न्निवापाम्भः पूर्वं पिबसि कथमेवं त्वमधुना।।[10]

दुर्योधन शोकाकुल अपनी माता को समझाते हुए कहता है कि तुम ऐसी दीनतापूर्ण बात क्यों कहती हो? तुम वीरांगना हो। तुम अपने मृत सौ पुत्रों की चिन्ता न करके मुझ अयोग्य की चिन्ता कर रही हो?

मातः किमप्यसदृशं कृपणं वचस्ते
सुक्षत्रिया क्व भवती च दीनतैशा।
निर्वत्सले सुतषतस्य विपत्तिमतां
त्वं नानुचिन्तयसि रक्षसि मामयोग्यम्।।[11]

प्रकृति के सुकुमार और कठोर दोनों रूपों का वर्णन इस नाटक में मिलता है। कवि उषाकाल का वर्णन करते हुए कहता है कि कमलदल में सूर्य की किरणों के पहुँचने से भौंरे जाग गए हैं और रात्रि भर भ्रमरी के साथ रमण करके कमलिनी से बाहर निकल रहे हैं। इसमें कवि का रसिक एवं भावुक हृदय देखा जा सकता है।

जुम्भारम्भप्रविततदलोपान्तजालप्रविष्टै–
र्भाभिर्भानोर्नृपतय इव स्पृश्यमाना विबुद्धाः।
स्त्रीभिः सार्धं घनपरिमलस्तोकलक्ष्यांगरागा–
न्मुंचन्त्येते विकचनलिनीगर्भशय्यां द्विरेफाः।।[12]

भयंकर आँधी के वर्णन में प्रकृति के कठोर रूप का चित्रण है –

दिक्षु व्यूढांगघ्रिपांगस्तृणजटिलचलत्पांशुदण्डोऽन्तरिक्षे0।[13]

प्रस्तुत नाटक में अलंकारों के सुन्दर प्रयोग हुए हैं। 'चत्वारो वयमृत्विजः स भगवान् कर्मोपदेष्टा हरिः0[14] में रूपक है। 'तमहमरागमकृष्णं कृष्णद्वैपायनं वन्दे[15] में विरोधाभास है। 'सत्पक्षा मधुरगिरः....निपतन्ति धार्तराष्ट्राः0[16] और 'निर्वाणवैरदहनाः .....स्वस्था भवन्तु कुरुराजसुताः सभृत्याः[17] में श्लेष की सुन्दर छटा है।

कवि ने कहीं–कहीं दार्शनिक योग्यता भी प्रकट की है। श्रीकृष्ण के वर्णन में परम पुरुष का दार्शनिक विवेचन मिलता है :–

आत्मारामा विहितरतयो निर्विकल्पे समाधौ
ज्ञानोत्सेकाद् विघटिततमोग्रन्थयः सत्त्वनिष्ठाः।
यं वीक्षन्ते कमपि तमसां ज्योतिषां वा परस्तात्
तं मोहान्धः कथमयममुं वेत्ति देवं पुराणम्।।[18]

कुछ अत्यन्त सुन्दर सुभाषित भी मिलते हैं। मृत्यु अवश्यम्भावी है तो युद्ध से भागकर अपने यश को क्यों कलंकित करते हो?

यदि समरमपास्य नास्ति मृत्योर्भयमिति युक्तमितोऽन्यतः प्रयातुम्।
अथ मरणमवश्यमेव जन्तोः किमिति मुधा मलिनं यशः कुरुध्वे।।[19]

वेणीसंहार काव्य की दृष्टि से वीररस को उन्मीलित करने में सर्वथा समर्थ है। मुख्य रस वीर तथा अंगरस रौद्र एवं श्रृंगार है। ओजगुण का सर्वातिशायी प्रभाव है, काव्य में ओजस्विता एवं तेजस्विता कूट कूटकर भरी है। समासबहुला शैली होने से विजय तथा रस दोनों के अनुकूल पद्य युक्त चित्त को प्रज्वलित करने की क्षमता रखते हैं। युद्ध के अनुकूल विकट वर्णों का विन्यास तथा समास की बहुलता से गाढ़बन्ध का चातुर्य वेणीसंहार के काव्य सौन्दर्य के पर्याप्त परिचायक हैं।

सन्दर्भः

1. वेणीसंहार– 5/24।
2. तत्रैव– 3/37।
3. तत्रैव– 2/21।
4. तत्रैव– 2/15।
5. तत्रैव– 1/21।
6. तत्रैव– 1/22।
7. तत्रैव– 1/15।
8. तत्रैव– 5/30।
9. तत्रैव– 2/18।
10. तत्रैव– 6/31।
11. तत्रैव– 5/3।
12. तत्रैव– 2/8।
13. तत्रैव– 2/19।
14. तत्रैव– 1/25।
15. तत्रैव– 1/14।
16. तत्रैव– 1/6।
17. तत्रैव– 1/7।
18. तत्रैव– 1/23।
19. तत्रैव– 3/6।